लेखों के सारांश हिन्दी व अंग्रेजी में

मधुरगुणा (*स्टेविया रेबॉडियाना*) का भारत में प्रवर्धन, शोध एवं व्यावसायिक उत्पादन

वीरेन्द्र सिंह*, के रमेश, नीमा डब्ल्यू मेगेजी, वी के कौल एवं पी एस आहूजा

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर-176 061 (हिमाचल प्रदेश)

सारांश : *स्टेविया रेबॉडियाना* ऐस्टेरेसी कुल का अत्यधिक मिठास युक्त एक बहुवर्षीय शाक है। यह पौधा पैरागुआ का मधुर शाक (स्वीट हर्ब) कहलाता है। इसका मूल उत्पत्ति स्थान दक्षिण अमेरिका का पौध विविधता केन्द्र है जहाँ यह बहुतायत से जंगलों में पाया जाता है। कई देशों यथाः जापान, चीन, ताईवान, थाईलैंड, कोरिया, कनाडा आदि में फसल के रूप में इसकी खेती काफी लोकप्रिय होती जा रही है। हमारे देश में इसे दक्षिण भारत में पहली बार वर्ष 1997 में उगाया गया और वर्ष 2000 से हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान ने इसे उत्तरी क्षेत्र में फैलाया। भारत में कई राज्यों यथाः उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और जम्मू एवं कश्मीर में इसकी खेती की शुरुआत हो चुकी है। व्यावसायिक तौर पर इस पौधे की पत्तियों से स्टीवियोसाइड (10-12%) एवं रेबाडियोसाइड-ए (3 से 4%) यौगिकों के मिश्रण को निष्कर्षित करके उपयोग में लाया जाता है। इस पौधे से प्राप्त होने वाली मिठास न केवल ऊर्जा रहित है बल्कि उपभोग करने पर यह मानव शरीर की किसी भी मेटाबॉलिक प्रक्रिया में शामिल नहीं होती । स्टेविया का उपयोग व्यापक स्तर पर च्विंगम, टूथपेस्ट, माउथवॉश तथा ध ूम्रपान प्रतिरोधी टिकियों आदि के रूप में किया जा रहा है। स्टीवियोसाइड का उपयोग विभिन्न आहारों, पेय पदार्थों, कॉफी और चाय आदि में, जहाँ भी मिठास की आवश्यकता होती है, व्यापक रूप से किया जाता है। जल विलेय श्वेत यौगिक वर्ग के दस विभिन्न एन्ट-कॉरीन डाइटर्पीन ग्लाइकोसाइडों की उपस्थिति स्टेविया को गन्ने से निर्मित की जाने वाली शक्कर की तुलना में 300 गुना ज्यादा मिठास वाला स्रोत बना देती है। जबकि ताज़ा पत्तियाँ गन्ने से प्राप्त होने वाले सुक्रोस की तुलना में 30 गुना अधिक मीठी होती हैं। स्टेविया को उपोष्णकटिबंधीय शिवालिक क्षेत्र एवं हिमालय की तलहटियों में और मध्यम शीतोष्ण क्षेत्रों की पहाड़ियों में बहुवर्षीय फसल के रूप में सफलतापूर्वक उगाया जा रहा है। इस फसल को अधिक ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में गर्मियों के मौसम में वार्षिक फसल और दक्षिण भारत के मैदानी शीतोष्ण क्षेत्रों में बहुवर्षीय फसल के रूप में उगाया जा सकता है। देश के विभिन्न भागों में कृषकों ने इसे अपनाया है और उन क्षेत्रों से इसकी उत्पादकता एवं गुणवत्ता के प्रमाण सामने आ रहे हैं। इस स्वीट हर्ब को बीज से उत्पाद तक विकसित करने में हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इस संस्थान में इसके प्रवर्धन, स्थापना, उत्पादकता एवं गुणवत्ता का निर्धारण, कृषिकरण और प्रसंस्करण प्रक्रिया का मानकीकरण तक का कार्य किया गया है। दो प्रकार की कृषि उपजाति के प्रयोग से संकर बीज का उत्पादन कर इसके बीजों के अकुंरण से जुड़ी समस्या का समाधान कर लिया गया है और प्रसंस्करण तकनीक हस्तातंरण के लिए उपलब्ध है।

Madhurguna (*Stevia rebaudiana*) : Introduction, research and commercial production in India

Virendra Singh, K Ramesh, Nima W Megeji, V K Kaul & P S Ahuja
Natural Plant Products Division
Institute of Himalayan Bioresource Technology
Post Box 6, Palampur-176 061 (H.P.)

Abstract

Stevia *(Stevia rebaudiana)* indiginously known as 'Madhurguna' is a sweet perennial plant that belongs to the family Asteraceae. It is also called as Sweet herb of Paraguay. This plant is a native of South America which is also the centre of diversity. As a crop it is popular in few countries such as Japan, China, Taiwan, Thailand, Korea, Mexico, USA, Malaysia, Indonesia, Tanzania and Canada. It was introduced for the first time in South India during 1997. However, in North India, this plant was introduced by Institute of Himalayan Bioresource Technology (IHBT) during 2000. It is now under cultivation in Uttaranchal, HP, Punjab, Haryana, Chattisgarh, UP, MP and Jammu & Kashmir. *S. rebaudiana* commercially exploited for the diterpene glycosides, stevioside (10-12%) and rebaudioside A (3- 4%). The sweetness of the plant is not only free of calories, but it does not get metabolized in the body. This is used for the manufacture of chewingum, tooth paste, mouth wash and antismoking pills etc. The sweetness in Stevia is attributed to the presence of 10 different ent-kaurene diterpene glycosides and is 300 times as sweet as cane-sugar. The fresh leaves are 30 times sweeter than sucrose obtained from cane sugar. Stevia can be grown as a

perennial crop in subtropical regions of Shivalik hills, foot-hills and mild temperate regions of the hills. It may also be grown as an annual crop in high altitude hilly regions during the warmer days of summer and in plains of South India as perennial crop. Farmers from different parts of the country have adopted this crop and results of productivity and quality are encouraging. IHBT, Palampur played a major role in the development of the sweet herb from seed to product. The work has been carried out on its introduction, propagation, cultivation, quality evaluation and processing. Seed germination problems have been solved by making hybrid seeds from different accessions. Processing technology is available for extension.

वैलेरियाना जटामांसी : उभरती सगन्ध एवं औषधीय फसल

नलिनी रामावत, के रमेश, वीरेन्द्र सिंह* एवं वी के कौल

प्राकृतिक पादप उत्पाद विभाग

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर -176 061 (हिमाचल प्रदेश)

सारांश : *वैलेरियाना जटामांसी* (*वैलेरियाना वालिशाइ* डी.सी.) वेलेरियेनेसी कुल का चौड़ी-पत्ती वाला, हरे रंग का बहुवर्षीय पौधा है। यह तगर, निहानी, मुस्कबाला (हिन्दी), तगर (संस्कृत) एवं इंडियन वेलेरियन (अंग्रेजी) के नामों से जाना जाता है। इसका मूल स्थान हिमालय के शुष्क शीतोष्ण जनपदों में है। यह हिमालय में कश्मीर से भूटान तक 1300 से 3300m की ऊँचाई तक भारत की खासिया पहाड़ियों पर एवं अफ़गानिस्तान और पाकिस्तान में अधिकतर पाया जाता है। इसकी जड़ों एवं प्रकन्दों से व्यावसायिक उपयोग का एक सगन्ध तेल प्राप्त होता है जिसका प्रयोग मध्यम सेडेटिव (औषधि) के रूप में किया जाता है जो दिमाग को आराम देने में सहायक होती है। इसका उपयोग हिस्टीरिया, हाइपोकोन्ड्रीयेसिस, मानसिक बीमारियों, डिप्रेशन आदि में भी किया जाता है। *वेलेरियाना जटामांसी* से प्राप्त वेलपोट्रीएट एवं सगन्ध तेल की माँग भारत एवं यूरोपीय देशों में तेजी से बढ़ रही है। इसका प्रवर्धन मुख्यतः प्रकन्दों द्वारा किया जाता है। मार्च से अप्रैल और अक्तूबर में इसे 30 × 30cm की दूरी पर खेत में लगाया जाता है। फरवरी में इसमें पुष्प आते हैं व मार्च-अप्रैल में इसके बीज बन जाते हैं। इसका प्रवर्धन बीज द्वारा भी किया जाता है। पौधे की वृद्धि एवं विकास के लिए छायादार स्थान एवं पानी के निकास की आवश्यकता होती है। जड़ें व प्रकन्द इस पौधे के महत्वपूर्ण अंग हैं जिनसे सगन्ध तेल (0.3-0.5%) एवं वेलपोट्रीएट (1.8-6.0%) की प्राप्ति होती है। आर्थिक उपयोग हेतु जड़ों की औसतन उपज 0.8-1 MT/ha होती है। रासायनिक विश्लेषण द्वारा यह पाया गया है कि *वैलेरियाना जटामांसी* की प्रजातियाँ मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं। कुछ प्रजातियों में मेलियोल की मात्रा अधिक होती है व कुछ में पचौली एल्कोहल की प्रचुरता होती है। जिन कृतकों में पचौली एल्कोहल की मात्रा 35 से 40% होती है उनकी माँग बाजार में अधिक है। हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान में मुस्कबाला की उत्पादन तकनीक एवं उच्च गुण के कृतकों को विकसित किया जा रहा है ताकि किसानों को उत्तम कृंतक का वितरण किया जा सके जिससे अधिकतम एवं उत्तम सगन्ध तेल एवं वेलपोट्रिएट प्राप्त हो सके।

Valeriana jatamansi : An imminent medicinal and aromatic crop

Naleeni Ramawat, K Ramesh, Virendra Singh* & V K Kaul

Natural Plant Products Division

Institute of Himalayan Bioresource Technology

Post Box 6, Palampur-176 061 (H.P.)

Abstract

Valeriana jatamansi Jones (*Valeriana wallichii* DC), family Valerianacae is a perennial plant with wide green leaves. Local names of the plant are Tagar (Hindi), Tagara (Sanskrit) and Indian Valerian (English). The plant is native to temperate zones of Himalayas and is found abundantly from Kashmir to Bhutan at an altitude of 1300-3000m, in the Khasia Hills (India) and in Afghanistan and Pakistan. Essential oil for commercial use is extracted from the roots and rhizomes of this plant which is used as mild sedative. The derived medicine is used for nervous debility and failing reflexes. It is also used in the treatment of hysteria, hypochondriasis, mental illness and depression etc. Valepotriate and essential oil derived from this plant are in high demand in India and European countries. It is multiplied mostly by rhizomes and is transplanted in field during March to April and October with a spacing of 30 × 30 cm. It bears flowers in February and seeds are formed in March to April. *Valeriana jatamansi* can also be multiplied by seeds. Drainage

and shade are important for growth and development of the plant. The roots and rhizomes are parts of prime importance which are reported to yield essential oil (0.3-0.5%) and valepotriate (1.8-6.0%). It can yield up to 0.8-1.0 MT/ha roots of economic importance. Chemical analysis revealed the presence of two types of chemotypes. Some have Patchouli alcohol as characteristic compound while others have maaliol as the main constituent of essential oil. The chemotypes having Patchouli alcohol between 35-40% are in more demand in the trade. Institute of Himalayan Bioresource Technology is presently engaged in developing agrotechniques for commercial cultivation of *Valeriana jatamansi* so that high quality morphotypes can be produced and distributed to farmers to enable them to fetch good quality essential oil as well as valepotriate.

क्लैरी सेज : कृषि औद्योगिकीकरण हेतु एक अधिक आय वाली सगंध फसल

रुचि सूद एवं वीरेन्द्र सिंह*
प्राकृतिक पौध उत्पाद प्रभाग
हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर-176 061(हिमाचल प्रदेश)

सारांश : क्लैरी सेज (*साल्विया स्क्लेरिया*) लैमिएसी कुल का एक महत्वपूर्ण सगंध पौधा है। इसका मूल स्थान दक्षिणी यूरोप है। इसे क्लैरी सेज, क्लैरी, आई ब्राइट, क्लियर आई, क्लैरी वार्ट व मसकाटल सेज आदि नामों से भी जाना जाता है। इसके तेल का उपयोग सौंदर्य प्रसाधनों, साबुन और भोज्य पदार्थों में होता है। इसके तेल के कई औषधीय गुण भी हैं इसलिए इसको तनाव, नींद न आना, बदहजमी, महावारी, गला खराब, हिस्टीरिया आदि के उपचार में प्रयोग में लाते हैं। क्लैरी सेज का उपयोग आधुनिक उत्पाद जैसे कंक्रीट, एब्सोल्यूट, स्क्लेरियोल व एम्ब्रॉक्स के उत्पादों में बढ़ता जा रहा है। इसका तेल सुवास में धनिये के समान होता है जिसमें मुख्य यौगिक तत्व लिनालूल (16%) और लिनेलाइल एसीटेट (67%) और कंक्रीट में 70% स्क्लेरियोल होता है जिससे एम्ब्रॉक्स की प्राप्ति होती है। हिमालय के शुष्क तथा शीतोष्ण क्षेत्र इसकी खेती के लिए उपयुक्त पाये गए हैं। भारत की कश्मीर-घाटी, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल व उत्तर प्रदेश के उच्च-तुंगता वाले शुष्क क्षेत्रों में इसकी खेती की जाती है। इसकी खेती के लिए कम वर्षा वाले क्षेत्रों का चुनाव अति आवश्यक है क्योंकि अधिक वर्षा से सगंध तेल की मात्रा कम हो जाती है। उन्नत किस्मों के आ जाने के कारण अब इसकी खेती भारत के मैदानी क्षेत्रों में भी की जाने लगी है। क्लैरी सेज का प्रवर्धन बीज द्वारा किया जाता है। पॉलीहाउस में बीज द्वारा पौधे लगाने के लिए मार्च-अप्रैल व अगस्त-सितम्बर के महीने उचित होते हैं। मार्च-अप्रैल की पौध को अक्तूबर माह में और अगस्त-सितम्बर की पौध को मार्च-अप्रैल में लगाना चाहिए। इसकी फसल कटाई के लिए अगस्त-सितम्बर में तैयार हो जाती है। औसतन प्रति हेक्टेयर भूमि से 5000 से 6000kg पुष्पक्रम की प्राप्ति होती है जिससे 22 से 25kg तेल प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में इसके तेल की कीमत 4,000 से 5,500 रुपए प्रति लीटर है। इससे मिलने वाले स्क्लेरियोल व एम्ब्रॉक्स भी बाजार में ऊँचे दामों में बिकते हैं। औषधीय एंव सगंध फसल उत्पादक इस फसल को अपनाकर लाभान्वित हो सकते हैं।

Clary Sage : A high value aromatic crop suitable for agricultural industrialisation

Ruchi Sood & Virendra Singh
Natural Plant Products Division
Institute of Himalayan Bioresource Technology, Post Box 6, Palampur 176 061 (H.P.)

Abstract

Clary sage (*Salvia sclarea*) also known as clary sage, clary, eye bright, clear eye, clary wart, muscatel sage is an important aromatic herb that belongs to family Lamiaceae. It is a native of Southern Europe. Its oil is widely used in cosmetics, soaps and food preparations. Besides, the oil has medicinal properties and is used in treating stress, tension, depression, insomnia, indigestion, menstruation, sore throat and hysteriac. It is valuable for its concrete, absolute, sclareol and ambrox. Its oil has coriander like aroma notes and contains 16% linalool and 67% linalyl acetate. The concrete contains 70% sclareol which is required as a starting material for ambrox. It is grown in dry temperate areas of Himalayas with no rain or scanty rain as rainy weather reduces essential oil content. With the emergence of improved cultivars, its cultivation is now also possible in north Indian plains. It is mainly propagated by seeds. The seeds are sown either in March-April or August-September. The nursery raised during March-April is transplanted in October while nursery raised during August- September is transplanted during March-April. It is ready for harvesting in August-September and yields 5000-6000 kg inflorescence per hectare which gives oil yield of 22 to 25 kg/ha. The cost of essential oil varied from Rs. 4000 to Rs 5500/L. The sclareol and ambrox derived from this plant are also sold at

premium prices in the international market. The medicinal and aromatic plant growers can benefit from this new emerging crop.

औषधीय एवं सगंध पौधों के उत्पादन के लिए कृषि क्रियाओं हेतु दिशा निर्देशन

पी के नेमा, ज्ञानेन्द्र तिवारी, ओ पी सिंह, रूपेश चतुर्वेदी एवं पी के जैन
उद्यानिकी महाविद्यालय, ज ने कृ वि वि, मन्दसौर (म. प्र.)

सारांश : औषधीय एवं सगंध पौधों पर आधारित सौन्दर्य प्रसाधन एवं दवाओं की विश्व बाजार में अत्यंत मांग है। विश्व अर्थव्यवस्था में इन पौधों का बहुत बड़ा योगदान है। विश्व बाजार में अंतिम उत्पाद का गुणवत्ता नियंत्रण सबसे सबल पक्ष है, जोकि प्रतिस्पर्धात्मक बाजार में टिके रहने के लिए आवश्यक है। इस पत्र में औषधीय एवं सगंध पौधों से बने उत्पादों की गुणवत्ता उचित मानकों के अनुसार बनाने के उद्देश्य से सम्पूर्ण उचित कृषि क्रियाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है ताकि अंतिम उत्पाद आधुनिक प्रतिस्पर्धात्मक बाजार के निर्धारित मानकों पर खरे उतर सकें।

Guidelines for agricultural practices for the production of medicinal & aromatic plants

P K Nema, Gyanendra Tiwari, O P Singh, Roopesh Chaturvedi &
P K Jain
Horticulture College, J N K V V, Mandsaur (M P)

Abstract

There is a huge demand of cosmatics and drugs based on medicinal and aromatic plants in the international market. These plants contribute a large share in the world economy. Quality control of end product is the most important aspect in the world market, which is necessary survival in the competitive market. Present paper describes in detail the complete agricultural practices necessary to get quality end products based on medicinal and aromatic plants which can be of desired standard.

उत्तरांचल में सगंध फसलों का व्यावसायिक कृषिकरण

ओम नारायण, नृपेन्द्र चौहान एवं हेमा लोहानी
सगंध पौधा केन्द्र (कैप) सेलाकुई, देहरादून

सारांश : उत्तरांचल की भौगोलिक स्थिति एवं जलवायु सगंध फसलों के लिए अति उपयुक्त है। इसी परिप्रेक्ष्य में सगंध फसलों के महत्व को देखते हुए इन फसलों के व्यावसायिक कृषिकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 16 अगस्त 2003 को सगंध पौधा केन्द्र, सेलाकुई, देहरादून की स्थापना की गयी। केन्द्र द्वारा अधिक ऊंचाई (लगभग 2500m) वाले क्षेत्रों में जटामांसी, जम्बू, *कैरम कारवी* एवं गन्द्रायण, 1000-2500m तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों के लिए जिरेनियम, गुलाब, कैमोमाइल एवं *टैजेटीज माइन्यूटा* तथा 1000m तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों के लिए लैमनग्रास, सिट्रोनेला, पामारोजा, जामारोजा, मैन्था, पचौली, गैंदा, कैमोमाइल, खस, नागरमोथा एवं तुलसी आदि फसलों का कृषिकरण सफलतापूर्वक करवाया जा रहा है। केन्द्र द्वारा अभी तक 102 हैक्टेयर क्षेत्रफल में सगंध फसलों का कृषिकरण कराया जा चुका है। यह कृषिकरण समूह अवधारणा को ध्यान में रखकर कराया जा रहा है तथा एक समूह में 3-4 फसलें, 7-8 हैक्टेयर क्षेत्रफल में उगायी जाती हैं जिसको आसवित करने के लिए एक 5-6 कुन्तल क्षमता वाली आसवन यूनिट लगाई जाती है, जिससे यूनिट पूरे वर्ष चलती है। तेल की मात्रा अधिक होने से विपणन में सुविधा रहती है। इन समूहों में चयनित किसानों को प्रशिक्षण, बीज-पौध, आसवन, गुणवत्ता नियन्त्रण व बाजार की सुविधा, सगंध पौधा केन्द्र (कैप) द्वारा उपलब्ध करायी जाती है। इस प्रकार अभी तक 25 समूह स्थापित हो चुके हैं, जिसमें लगभग 698 कृषक सगंध फसलों का उत्पादन कर रहे हैं। उत्तरांचल जैसे छोटे

पहाड़ी राज्य में परम्परागत फसलों की अपेक्षा सगंध फसलों के कृषिकरण द्वारा कृषि योग्य उपलब्ध कम भूमि पर भी अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। उत्तरांचल की विषम भौगोलिक परिस्थितियों का कृषक के हित में उचित प्रयोग कर कृषकों में आर्थिक व सामाजिक समृद्धि लायी जा सकती है।

Commercial cultivation of aromatic plants in Uttaranchal

Om Narayan, Nirpendra Chauhan & Hema Lohani
Centre for Aromatic Plants, Selaqui, Dehradun
Uttaranchal

Abstract

Keeping in view the geographical & climatic conditions of Uttaranchal favourable for cultivation of Aromatic Plants, Govt. of Uttaranchal has established Herbal Research & Development Institute, Centre for Aromatic Plants (CAP), Selaqui, Dehradun on 16 August 2003. Centre has initiated cultivation work in cluster approach. Twenty five clusters of different aromatic crops viz. *Valeriana jatamansi*, Jamboo, *Carum carvi*, Geranium, Rose, Chamomile, Lemongrass, Citronella, Palmarosa, Jamarosa, Mentha, Patchouli, Tagetes, Vetiver and French Basil have been developed through cultivation with the help of local farmers. Farmers engaged in these clusters are being provided various facilities like training, proven quality planting material, distillation, quality analysis and marketing facilities by this Centre. Till now 102 hectare land has been cultivated. About 16 distillation units of required capacity have been installed in the clusters. Approx. 800 kg oil has been produced by farmers from different aromatic crops. For the marketing of oil, quality of oil is also certified by the Centre and time to time different types of meets like 'Buyers-Seller' meet and 'Kisan Ghoshthis' are being organized for further promotion of aromatic crops in this area.

ड्रेकोसिफैलम हीट्रोफिलम : उच्च पहाड़ी शीतोष्ण क्षेत्रों के लिए नई नकदी फसल

रुचि सूद, नीमा वांगमु मेगेजी, वीरेन्द्र सिंह* एवं वी के कौल

प्राकृतिक पादप उत्पाद प्रभाग

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर- 176 061 (हिमाचल प्रदेश)

सारांश : ड्रेकोसिफैलम (*ड्रेकोसिफैलम हीट्रोफिलम* बेंथ) लेमिएसी कुल का सगंध पौधा है। इसका उल्लेख *ड्रे. एकैन्थॉयडीज़, ड्रे. काचगारीकम, ड्रे. पेमीरीकम* आदि नामों से भी किया जाता है। मूलतः यह पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में पाया जाता है। भारत में यह जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल व सिक्किम सहित 3000 से 5200m की तुंगता वाले उत्तरी क्षेत्रों में जंगली रूप में पाया जाता है। ड्रेकोसिफैलम को हिमाचल प्रदेश की स्पिति घाटी व लद्दाख के स्थानीय लोग आँखों की लाली तथा जलन आदि रोगों के लिए प्रयोग में लाते हैं। इसके प्रकंदों को सब्जी के रूप में खाया जाता है। इसमें वाष्पशील सगंध तेल की मात्रा 0.17 से 0.25% होती है। दमस्क गुलाब के बाद यह दूसरा पौधा है जिसके तेल से अधिकतम मात्रा में सिस एवं ट्रांस रोज ऑक्साइड रासायनिक यौगिक की प्राप्ति होती है जिसका उपयोग सुगंधित द्रव्य बनाने वाले उद्योगों में होता है। इसके तेल में कई औषधीय गुण भी विद्यमान होते हैं। हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान में किए गए शोध कार्यों से पता चला है कि इसे समशीतोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में बहुवार्षिक फसल के रूप में तथा मध्यम एवं उच्च तुंगता वाले क्षेत्रों में वार्षिक फसल के रूप में उगाया जा सकता है। इसके लिए अच्छी जल निकास वाली रेतीली दोमट भूमि, जिसमें सूर्य की किरणें व्यापक रूप से पड़ती हों, उपयुक्त पाई गई है। इसका प्रवर्धन मुख्यतः बीज एवं तनों की कलमों द्वारा किया जाता है। उच्च पहाड़ी क्षेत्रों में पौध लगाने का समय अप्रैल-मई होता है जबकि मध्यम ऊंचाई (बर्फ रेखा से नीचे) के क्षेत्रों में सितम्बर-अक्तूबर के महीने उचित होते हैं। कटाई के लिए इसकी फसल उच्च पहाड़ी क्षेत्रों में सितम्बर माह में तैयार हो जाती है जबकि निचले क्षेत्रों में सितम्बर-अक्तूबर में लगाई गई फसल की कटाई के लिए प्रथम बार मई माह तथा दूसरी बार जुलाई-अगस्त उपयुक्त हैं। अच्छी फसल से प्रति हैक्टेयर 4 से 7 टन ताजी उपज प्राप्त होती है जिसका शुष्क भार 0.6-1.0 टन रह जाता है, जिससे 10 से 12 किलो तेल प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है। इस फसल की पुनर्जनन क्षमता काफी ज्यादा है, अतः इसकी कटाई साल में दो से तीन बार कर सकते हैं। इसके तेल में कई महत्वपूर्ण रासायनिक द्रव्यों का सम्मिश्रण है जिसकी वजह से आने वाले समय में इसकी माँग सगंध तेल बाजारों में

बढ़ सकती है। अतः यह एक विशिष्ट, कम समय की नकदी फसल के रूप में उभरती हुई फसल है जिसके विकास के लिए उपरोक्त संस्थान प्राथमिकता के आधार पर कार्य कर रहा है।

Dracocephalum heterophyllum Benth. : A new potential cash crop for high hill temperate regions

Ruchi Sood, Nima W Megeji, Virendra Singh & VK Kaul
Natural Plant Products Division
Institute of Himalayan Bioresource Technology
Post Box 6, Palampur-176 061 (H.P.)

Abstract

Dracocephalum (*Dracocephalum heterophyllum* Benth.) belongs to family Lamiaceae. The synonyms are *D. acanthoides* Edgew, *D. kaschgaricum* Rupr, and *D. pamiricum* Briq. It is a native of western Himalayas. In India, it has been reported growing wild in northern parts including Jammu & Kashmir, Himachal Pradesh, Uttaranchal and Sikkim at an elevation of 3000-5200m. It is found growing wild as annual in temperate regions and as perennial in sub-temperate regions. It thrives best in well drained sandy loam soils rich in organic matter which are exposed to morning sun. Dracocephalum is used in treating eye ailments like redness of eyes, irritation and conjunctivitis by the native people of the Spiti valley in Himachal Pradesh and in Ladakh region. Use of tubers as vegetable and as pasture for sheep and goat has also been reported. Essential oil content of *D. heterophyllum* varied from 0.17 -0.25%. It is the next best source after Damask rose of cis- and trans-rose oxide, which is used in fragrance industries. Dracocephalum oil has certain medicinal properties. It is mainly propagated by seed and stem cuttings. Nursery raising should be done in April-May (high hills) and September-October (mid hills). Harvesting is done manually during September at high hills whereas in sub-temperate region harvesting was done twice during May and July-August. The fresh herb yield is 4-7 t/ha which corresponds to weight yield of 0.6-1.0 t/ha. The oil yield is 10-12 kg/ha. The crop has high regeneration capacity and can give 2-3 harvests each year. As the Dracocephalum oil is rich in certain volatile constituents its demand will likely to increase in near future. IHBT is working at exploring this short duration, valuable crop.

एकोनाइटम हीटरोफिलम का संरक्षण एवं घरेलूकरण

रेखा कुशवाहा, राम कृष्ण ओगरा, ओम प्रकाश एवं अमिता भट्टाचार्य

जैवप्रौद्योगिकी प्रभाग, हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर - 176 061 (हि. प्र.)

सारांश : अतिस (एकोनाइटम) हिमालय के अल्पाइन एवं सब-अल्पाइन क्षेत्रों में अधिक ढलवां घासीय ढलानों पर पाया जाता है। इसकी जड़ें द्विवर्षीय, जोड़ों में और कन्दिल होती हैं। इस पादप के कन्दों में अस्फटीय, अविषालु क्षाराभ एटीसीन होता है जो मुख्यतयाः इसकी जड़ों में पाया जाता है। अतीस में मिलने वाले अन्य क्षाराभ हेटेरेटीसीन, हिस्टीसीन, हेटरोफिल्लीसीन, हेटरोफिल्लीडीन, हाइटीडीन और एटीडीन होते हैं। विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में लगातार बढ़ती मांग के कारण अतीस संकटापन्न श्रेणी में पहुंच गया है अतः इसका संरक्षण एवं घरेलूकरण एक अनिवार्यता बन गई है। इस दिशा में हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर में *एक्स सीटू* दशा (हरितगृह) में इस पादप को उगाकर तथा संरक्षित कर एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है। घरेलूकरण के दौरान उत्पन्न समस्याओं को कम करने के लिए बीजों को उगाने से पहले गर्म पानी (40-60°C, 30-120 सेकंड के लिए) से उपचारित किया गया जिसके कारण सभी बीज़ एक साथ अंकुरित हो गये। इस उपचार से पौधों की उपज तथा उत्पादन में भी वृद्धि हुई। *एक्स सीटू* दशा में संरक्षित दो वर्षीय पादपों के कुल क्षाराभों की तुलना जब प्राकृतिक पादपों के कन्दों से की गई तो महत्वपूर्ण अन्तर प्राप्त नहीं हुआ अपितु बीजों तथा कंदों द्वारा उगाए गए पौधों के तिथि चक्र में अन्तर प्राप्त हुआ। एक्स-सीटू दशा में उगाए गए पौधों में जल्दी फूल एवं बीज आ गये तथा क्षारक मात्रा भी प्राकृतिक पादपों के समान पाई गई। अतः यह उपाय अतीस के दीर्घकालिक

व्यापारीकरण के लिए एक मील का पत्थर है। इसके कन्द आयुर्वेदिक एवं यूनानी पद्धतियों से बनाई हुई औषधियों जैसे महासुदर्शन चूर्ण, चन्द्रप्रभावटी, योगराज गुग्गल, माजुन बवासीर और माजुन गुग्गल में उपयोग किए जाते हैं।

Conservation and domestication of *Aconitum heterophyllum*

Rekha Kushwaha, Ram Krishan Ogra, Om Prakash &
Amita Bhattacharya
Division of Biotechnology, Institute of Himalayan Bioresource Technology
Post Box 6, Palampur-176061 (H.P.)

Abstract

Aconitum is found in the grassy slopes of alpine and sub-alpine regions of Himalaya. The roots of Aconitum are tuberous and biennial and mainly contain non-crystalline, non-poisonous alkaloid 'atisine'. Other alkaloids found in it are heteratisine, histisine, heterophyllisine, heterophyllidine, hitidine and atidine. Due to its medicinal properties and uses in various medicinal systems, it has now acquired an endangered status. Therefore, its conservation and domestication has become necessary. In this direction, we have conserved plants under ex-situ conditions (Green-house) of Institute of Himalayan Bioresource Technology, Palampur. Employment of hot water treatment (40-60°C for 30-120 sec.) of seeds for synchronized germination and domestication resulted in increased plant growth and also its production. Comparison of the growth and development of plants propagated through tubers and seeds showed that plants propagated through seeds were better as compared to the tuber propagated ones. Time difference between the life cycles of plants propagated through seeds and tubers was also observed. Under *ex-situ* conditions, earlier anthesis and seed setting were observed but the alkaloid content of plants under *ex-situ* condition was at par with that of natural populations. Our finding thus, seems to be an important landmark in sustainable commercialization of Aconitum. Tubers of Aconitum are routinely used in many Ayurvedic and Homoeopathic medicines such as Mahasudarsan Churna, Chandrprabha Vati, Yograj Guggul, Majun Bavaseer and Majoon Guggul.

ग्लैडियोलस की संकर किस्मों का विकास एवं पेटेंट

देवेन्द्र ध्यानी एवं देवाशीष मुखर्जी
हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर - 176 061 (हि.प्र.)

सारांश : पुष्प उत्पादन के लिए उपयुक्त कंदीय तथा घनकंदीय फसलों में ग्लैडियोलस का प्रमुख स्थान है। अपनी विभिन्न किस्मों, रंगों एवं उचित मूल्य पर आम लोगों को उपलब्ध हो जाने के कारण ग्लैडियोलस को काफी लोकप्रिय समझा जाता है तथा बाजारों में इसकी मांग निरंतर बनी रहती है। पारम्परिक संकरण विधि द्वारा ग्लैडियोलस की उत्तम संकर किस्मों का विकास करने के लिए सन् 1991-92 में ग्लैडियोलस की विभिन्न किस्मों से व्युत्क्रम संकरण तैयार किये गये। इन व्युत्क्रम संकरणों से उत्पन्न संकर किस्मों से अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों (नार्थ अमेरिकन ग्लैडियोलस काउंसिल (NAGC), यू.एस.ए. तथा द रॉयल हॉर्टीकल्चरल सोसायटी, यू.के. के अनुसार 4 उन्नत किस्मों : पालमपुर प्राइड, पालमपुर डिलाइट, ग्रेस तथा द सेन्ट का चयन उनके रंग, फूलों की संख्या, आकार तथा प्रकार, धनकन्द तथा धनकन्दक उत्पन्न करने की क्षमता इत्यादि के अनुरूप किया गया तथा इनका अमेरिका में पेटेंट प्राप्त कर लिया गया है। हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर द्वारा विकसित अन्य 6 किस्मों : पालमपुर क्वीन, पालमपुर प्रिंसेज, ब्रिक ब्यूटी, तुषार मौलि, अनुराग एवं क्यूट मुन्नी को अमेरिकन पेटेन्ट मिल चुका है तथा ये भारत की पहली फूलों की किस्में हैं, जिन्हें अमेरिका में पेटेंट प्राप्त हुआ है। यह इस बात का द्योतक है कि हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान में अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के अनुरूप इस क्षेत्र में भी कार्य हो रहा है।

Development and patenting of Gladiolus hybrids

Devendra Dhyani & Debashish Mukherjee
Institute of Himalayan Bioresource Technology, Post Box 6, Palampur-176 061 (H.P.)

Abstract

In order to develop gladiolus hybrid through conventional breeding, several reciprocal crosses were made. Seedlings raised hybrid seeds of these reciprocal crosses were evaluated for quality parameters and the plants with desired traits were selected as per the international standards. Initially, 6 hybrids were released and US patents were obtained. In the second lot, 4 hybrids are given in this paper. These 4 hybrids have also been granted patent in USA. These are the first gladiolus hybrids of India, which have been granted patent in USA. The seedlings produced by the hybrid seeds were of varied types with diverse colours, eventhough the parents were the same. Ultimately, quite a few seedlings could be selected and developed as new varieties as per the international standards. Thus, large number of hybrid seeds of reciprocal crosses is imperative for gladiolus breeding, as the large number of hybrid seeds offer better chances of getting desired traits.

पश्चिमी हिमालय के कुछ उपेक्षित अपितु महत्वपूर्ण सुगन्धित एवं औषधीय पौधे

अमित चावला, के एन सिंह, वरुण शर्मा, बृजलाल*, आर डी सिंह एवं पी एस आहूजा

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर - 176 061 (हिमाचल प्रदेश)

सारांश : हिमालय क्षेत्र प्राचीन काल से ही जीवन-दायिनी जड़ी-बूटियों व सुगन्धित पौधों का मुख्य स्रोत रहा है। आज भी यहां पर बहुत सी अल्पज्ञ परन्तु आर्थिक महत्व की ऐसी प्रजातियाँ हैं जो प्रकृति में प्रचुर मात्रा में पायी जाती हैं। प्रस्तुत लेख में हिमालय क्षेत्र में पायी जाने वाली ऐसी ही 11 महत्वपूर्ण प्रजातियों जैसेः *ऐकीलिया मिल्लेफोलियम* लिनिअस *आर्क्टियम लाप्पा* लिनिअस, *आर्टिमीसिया मैरिटिमा* लिनिअस, *बोइनिंगहाउसेनिया एल्बिलोरा* (हुकर पुत्र) रिचब., *क्रैटेगस ऑक्सीएकेन्था* लिनिअस, *ड्रैकोसिफेलम हेटेरोफिलम* बैंथम, *हिप्पोफी रैहम्नोडीस* लिनिअस, *हिप्पोफी सैलिसिफोलिया* डॉन., *हिप्पोफी टिबेटाना* श्लैट., *हिस्सोफस ऑफिसिनेलिस* लिनिअस तथा *रोज़ा वेबियाना* रॉयल. की पहचान की गयी है जिनका हमारे देश में अभी तक व्यावसायिक दृष्टि से उपयुक्त दोहन नहीं हुआ है। अतः यहां पर इन प्रजातियों के औषधीय एवं आर्थिक महत्व को देखते हुए भविष्य में इनके व्यावसायिक दोहन की संभावनाओं पर चर्चा की गयी है।

Some overlooked but important medicinal and aromatic plants of Western Himalaya

Amit Chawla, K N Singh, Varun Sharma, Brij Lal*, R D Singh & P S Ahuja

Institute of Himalayan Bioresource Technology, Post Box 6, Palampur - 176 061 (HP)

Abstract

From time immemorial Himalaya has been a major source of valuable medicinal and aromatic plants. Even today, a number of valuable species found here, are overlooked as far as their commercial exploitation is concerned. Among such species found in Western Himalaya region, 11 species viz. *Achillea millefolium* Linn., *Arctium lappa* Linn., *Artemisia maritima* Linn., *Boenninghausenia albiflora* (Hook. f.) Reichb., *Crataegus oxyacantha* Linn., *Dracocephallum heterophyllum* Benth., *Hippophae rhamnoides* Linn., *H. salicifolia* Don., *H. tibetana* Schlt., *Hyssopus officinalis* Linn. and *Rosa webbiana* Royle were identified which are having great medicinal importance but so far these were not exploited commercially in India. Therefore, keeping in view their economic and medicinal importance, future prospects for commercial utilization of these species have been discussed.

सगन्ध गुलाबों में गुणवत्ता वृद्धि के लिए संकरण

देवेन्द्र ध्यानी*, एस कार्थिगेयन एवं पी एस आहूजा

हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर 176 061 (हि. प्र.)

सारांश : गुलाब का उपयोग मानव द्वारा औषधियों एवं सगंध तेलों के रूप में प्राचीन काल से ही किया जाता रहा है तथा यह अपने बहुउपयोगी गुणों के कारण आज भी विश्व में काफी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आज के कर्तित पुष्प व्यवसाय में प्रचलित गुलाबों की विभिन्न प्रजातियों को

संकरण तकनीकियों द्वारा प्राकृतिक जातियों के संकरण से ही उत्पन्न किया गया है। गुलाब के सगंध तेलों के उत्पादन के लिए विश्व आज भी चन्द प्राकृतिक रूप से उत्पन्न जातियों व उनके कृन्तकों पर ही निर्भर है। आज के औद्योगिक युग में गुलाब के सगंध तेलों की बढ़ती मांग को देखते हुए यह आवश्यक है कि संकरण द्वारा ऐसी प्रजातियों का विकास किया जाए जिनमें सगंध तेल की मात्रा अधिक हो या फिर अन्य प्रकार से गुणवत्ता वृद्धि हो। यह कार्य अत्यधिक श्रम, समय व अनिश्चितता वाला होता है क्योंकि गुलाब की जातियों में ऐच्छिक आनुवंशिक अवयवों को उत्पन्न करना अत्यधिक कठिन है। इस दिशा में हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर ने संकरण का कार्य प्रारम्भ किया है तथा उसके अनुकूल परिणाम आने लगे हैं। हो सकता है कि भविष्य में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अच्छी गुणवत्ता वृद्धि युक्त संकर किस्मों को विकसित करने में सफलता प्राप्त हो जाए।

Hybridization in Fragrant Roses for quality improvement

D Dhyani, S Karthigeyan & P S Ahuja
Institute of Himalayan Bioresource Technology, Post Box 6, Palampur 176 061 (H.P.)

Abstract

Rose has been used by human beings for medicinal and essential oil purposes since ancient time, and even today it is globally important for various purposes. Many hybrid rose cultivars popular in present cut flower markets have been bred through hybridization from natural species. For rose oil production, the world is still dependent on naturally occurring species and their clones. Visualizing the increasing demand of rose oil in the modern era of industrialization, it is pertinent to develop rose hybrids having higher oil content and other desirable characteristics. This arduous task is time consuming and uncertain because in roses it is very difficult to produce desirable genetic makeup. The Institute of Himalayan Bioresource Technology, Palampur has started breeding work in this direction and some desirable results are being obtained. It is envisaged that in near future some desirable quality hybrids could be developed through this endeavour.

हिमाचल प्रदेश में बड़ी इलायची की खेती

आर के सूद, आर डी सिंह एवं पी एस आहूजा
हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पोस्ट बॉक्स 6, पालमपुर - 176 061 (हिमाचल प्रदेश)

सारांश : बड़ी इलायची या काली इलायची (*अमोमम सुबुलेटम Amomum subulatum* Roxb.) एक मसाले वाली फसल है। यह प्रमुख रूप से भारत के उत्तर-पूर्वी भाग के उप-हिमालयी क्षेत्रों में उगाई जाती है। नेपाल तथा भूटान में भी यह मुख्य नकदी फसल समझी जाती है। मध्य-पर्वतीय क्षेत्र जहां अच्छी वर्षा, जैविक तत्व से भरपूर रेतीली दोमट अम्लीय मिट्टी तथा नमी-युक्त छायादार स्थान होते हैं वहां पर इस फसल को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। वर्षों पहले हिमाचल प्रदेश में भी लघु स्तर पर यह फसल उगाई जाती थी, पर समय के साथ-साथ विभिन्न कारणों से यह विलुप्त होती जा रही है। हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर ने इस फसल के स्थानीय जर्मप्लाज्म के संरक्षण हेतु कुछ कदम उठाए हैं। इसके साथ ही यह संस्थान मसाला बोर्ड द्वारा विकसित उच्च-उत्पादन युक्त किस्मों का हिमाचल प्रदेश के अनुकूल चयन एवं विस्तार कर रहा है।

Cultivation of Large Cardamom in Himachal Pradesh

R K Sood, R D Singh & P S Ahuja
Institute of Himalayan Bioresource Technology, Post Box 6, Palampur - 176 061 (HP)

Abstract

Large Cardamom or Black Cardamom (*Amomum subulatum* Roxb.) is a spice crop, chiefly cultivated in north-east sub-Himalayan regions of the country. Besides, it is also grown in Nepal and Bhutan. The crop is best suited for mid-hill areas with high rainfall, sandy-loam soil rich in organic matter having acidic pH and humid climate. Since long back,

Large Cardamom has been grown in small scale in Himachal Pradesh but with passage of time, the crop has been vanishing owing to variety of reasons. Institute of Himalayan Bioresource Technology has taken steps to conserve the local germplasm. The Institute is also engaged in screening and introducing high yield cultivars of this crop developed by the Spices Board.

हिमाचल प्रदेश के आर्द्र-शीतोष्ण क्षेत्रों में लैवेन्डर (*लैवेण्ड्यूला ऑफिसिनेलिस*) आधारित अंतः फसल-प्रणाली की संभाव्यता एवं लाभदायकता

गरिमा पुरी, दिनेश बडियाला एवं यू के पुरी
सस्यविज्ञान विभाग, चौधरी सरवन कुमार
हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर-176 062 (हि.प्र.)

सारांश : लैवेन्डर एक सगंध पौधा है। इसकी खेती में लागत अधिक और उत्पादन कम आता है जिसकी वजह से लैवेन्डर उत्पादकों को आर्थिक घाटा होता है। लैवेन्डर को प्रथम वर्ष से ही लाभकारी बनाने के लिए अंतःफसल-प्रणाली में विभिन्न दलहनी फसलों (माश, राजमाश और मटर) की 1 : 1, 1 : 2 एवं 1 : 3 के अनुपात में बिजाई कर परीक्षण किया गया। इस परीक्षण से ज्ञात हुआ कि लैवेन्डर और माश को 1 : 2 के अनुपात में लगाने पर सबसे अधिक 30.92 L/ha तेल की मात्रा प्राप्त होती है। लेकिन लैवेन्डर को एकल फसल के रूप में लगाने पर 19.91 L/ha तेल का उत्पादन हुआ। इस प्रणाली का आर्थिक विश्लेषण करें तो पता चलता है कि लैवेन्डर + माश 1 : 2 के अनुपात में लगाने से सबसे अधिक 55,436 रु. प्रति हैक्टेयर का शुद्ध लाभ होता है जबकि एकल लैवेन्डर में -4108 रु. रहा। इस परीक्षण से यह सिद्ध हो गया है कि प्रथम वर्ष में लैवेन्डर की खेती के बीच अगर माश जैसी दलहनी फसलें लगाई जाएँ तो किसान को नुकसान होने से बचाया जा सकता है, क्योंकि लैवेन्डर की रोपाई के प्रथम वर्ष में इसका उत्पाद नहीं मिल पाता है। अतः हिमाचल प्रदेश के किसानों को लैवेन्डर + माश 1 : 2 के अनुपात में लगाने की संस्तुति की जाती है।

Feasibility and profitability of Lavender (*Lavandula officinalis*) based intercropping systems under wet-temperate condition of Himachal Pradesh

Garima Puri, Dinesh Badiyala & U K Puri
Department of Agronomy, Chaudhary Sarwan Kumar Himachal Pradesh
Krishi Vishvavidyalaya, Palampur-176 062 (H.P.)

Abstract

A field trial was conducted to study the effect of intercropping of lavender with different leguminous crops (*viz.*, Mash, Rajmash and Peas) in the row ratio of 1:1, 1:2 and 1:3. The study revealed that Lavender + Mash in the row ratio of 1:2 gives the highest oil yield of 30.92 L/ha whereas, sole lavender yielded 19.91 L/ha of oil. Economywise also Lavender + Mash (1:2) recorded the highest net returns of Rs. 55,436/ha whereas sole lavender gave Rs. -4108/ha during the first year. Thus it was concluded that farmer can be saved from crop losses as lavender is having a gestation period of 1.5 years and does not yield in the first year.

हिमाचल प्रदेश के मध्यवर्तीय क्षेत्रों में बड़ी इलायची (*अमोमम सुबुलेटम*) की पौध उगाने की विधियों का मानकीकरण

युद्धवीर सिंह, सुशील शर्मा एवं एन के पठानिया
सब्जी एवं पुष्प विज्ञान विभाग, चौ. स. कृ. हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, पालमपुर-176 062 (हि.प्र.)

साराशः बड़ी इलायची मुख्यतः मसाले के रूप में तथा विभिन्न प्रकार के खाद्य एवं पेय पदार्थों में भी उपयोग में लाई जाती है। बड़ी इलायची में कई औषधीय गुण पाए जाते हैं और इसकी फसल किसानों की आमदनी बढ़ाने तथा विविधिकरण के लिए उत्तम विकल्प है। बड़ी इलायची की खेती को हिमाचल प्रदेश में बढ़ावा देने के लिए हि. प्र. कृ. वि. वि., पालमपुर के सब्जी एवं पुष्प विज्ञान विभाग में पौध उगाने के तरीकों पर शोध किया गया ताकि इसकी पौध उगाने की तकनीक विकसित करके किसानों को उपलब्ध कराई जा सके। इसकी पौध उगाने के लिए प्राकृतिक रूप से वातानुकूलित पॉलीहाऊसों को उत्तम पाया गया है। बीज अंकुरण जल्दी होने के कारण पौध प्रथम से द्वितीय नर्सरी में प्रतिरोपण के लिए शीघ्र तैयार हो जाती है। जब बीज का उपचार 25% HNO_3 (10 मिनट) तथा GA_3 (2000 ppm) से किया गया तो सबसे अधिक अंकुरण दर्ज हुआ। अम्ल से बीजों का उपचार करने पर अंकुरण अन्य उपचारों की तुलना में शीघ्र हुआ।

Standardisation of propagation techniques in Large Cardamom (*Amomum subulatum* Roxb.)

Yudhvir Singh, Susheel Sharma & N K Pathania
Department of Vegetable Science & Floriculture, CSK Himachal Pradesh
Krishi Vishvavidyalaya, Palampur-176 062 (H.P.)

Abstract

Large Cardamom is mainly used as a spice in various food preparations. Besides this, it has number of medicinal properties also. Large Cardamom is a potenital crop to increase the income of farmers in specific pockets of Himachal Pradesh and for diversification in the cropping system. Keeping in view its importance and to boost its cultivation in Himachal Pradesh, an experiment was conducted at the Experimental Farm of Vegetable Science & Floriculture, CSK HPKV, Palampur to standardize the propagation techniques of Large Cardamom. Early germination was observed in naturally ventilated poly-houses. Due to early germination, seedlings took less time for transplantation from primary to the secondary nursery. Higher germination was recorded when seeds were treated with 25% HNO_3 (10 minutes) and 2000 ppm GA_3. Besides this the seed germination was quicker in acid treated seeds as compared to other treatments.

ल्यूटिन के प्राकृतिक स्रोत गेंदे का हिमाचल प्रदेश की मध्य पर्वतीय दशाओं में स्थापन, कृषिकरण, प्रजातियों का चुनाव व गुणवत्ता सुधार

किरण कौल* एवं वाई एस बेदी
क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, विस्तार केन्द्र, पालमपुर-176 061 (हि.प्र.)

साराशः ल्यूटिन गेंदे (*टैजेटीज़ इरेक्टा* लिनिअस) की पंखुड़ियों में पाए जाने वाले वर्णकों का लगभग 90% होता है। आजकल ल्यूटिन का प्रयोग कुक्कुट आहार, खाद्य पदार्थों के वर्ण तथा न्यूट्रास्यूटिकल्स हेतु किया जाता है। गेंदे के फूलों की इष्टतम उपज अथवा गुणवत्ता सुधार के लिए भारत के विभिन्न भागों से आठ एक्सेशनों को एकत्रित किया गया तथा कांगड़ा घाटी की मध्य पर्वतीय दशाओं में एक जैसी कृषि तकनीक विधि ा से खेती की गई। ज़ैन्थोफिल की मात्रा तथा फूलों की उपज के आधार पर श्रेष्ठ एकसेशनों का चयन किया गया तथा इनका शुद्ध संतरी वंशक्रम अंतःप्रजनन विधि द्वारा बनाया गया। शुद्ध वंशक्रमों की पुष्प उपज 61-78 qt/ha तथा ज़ैन्थोफिल का उत्पाद 2.5-5 kg/ha पाया गया। इन वंशक्रमों का एकल तथा बहुप्रसंकरण विधि से द्विगुणित, संकर एवं संयुक्त बीज बनाने के लिए प्रयोग किया गया। संकर एवं संयुक्त बीजों से उगाए गये पौधों में संकर ओज के कारण पुष्प उपज 77-142 qt/ha तथा ज़ैन्थोफिल का उत्पाद 3.2-6.7 kg/ha पाया गया। इन प्रयोगों से निष्कर्ष निकलता है कि हिमाचल प्रदेश में गेंदे की सफल खेती औद्योगिक स्तर पर की जा सकती है तथा प्रजनन विधि द्वारा ज़ैन्थोफिल की उत्पादकता तथा गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

Natural source of lutein : Marigold (*Tagetes erecta* L.) Introduction, cultivation, selection and quality improvement under mid hill conditions of Himachal Pradesh

Kiran Kaul* & Y S Bedi
RRL Extention Centre, Palampur 176 061 (H.P.)

Abstract

Lutein ($C_{40}H_{56}O_2$) is the primary xanthophyll pigment that produces orange color in marigold (*Tagetes erecta* L.) flowers, composing roughly 90% of the petals identified pigments. This pigment from marigold is currently used as additive in poultry feed, food coloring and neutraceuticals.The increasing demand for marigold pigment has paved the way for genetic upgradation and expansion of cultivation of this flower within the country. Eight accessions of *Tagetes erecta* L. collected from various locations in India were introduced and cultivated under mid hills of Kangra Valley (H.P.) following uniform cultural practices. The accessions were assessed for growth performance, flower color, xanthophyll content and flower yield. Xanthophyll content was found highest in orange flowers in all the accessions. Promising accessions were selected and inbred to get pure lines with orange flower heads. The flower yield of the pure lines ranged from 61-78 qt/ha and xanthophyll yield varied from (2.5-5.0 kg/ha). The pure lines with xanthophyll content of 0.71, 1.4 and 0.9 were selected and combined by single and polycross method for hybrid and composite seed production. The flower yield of the progeny raised from hybrid and composite seed out yielded the inbred lines due to heterosis. It is concluded that Marigold can be cultivated as a successful industrial crop in H.P. and there is great scope for its improvement for xanthophylls (lutein).

उड़न राख का कृषि एवं वानिकी में पर्याहितैषी उपयोग*

अवधेश कुमार सिन्हा, निशांत कुमार श्रीवास्तव, लाल चन्द राम
केन्द्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान, धनबाद - 828108 (झारखण्ड)

सारांश : भारत में कुल विद्युत मांग का दो तिहाई से अधिक भाग ताप विद्युत संयंत्रों से प्राप्त होता है। इस समय हमारे देश में कुल 85 ताप विद्युत संयंत्र कार्य कर रहे हैं जिनके द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 240 मिलियन टन कोयले (औसत राख : 35-40%) के प्रदहन से 110 मिलियन टन उड़न राख निकलती है। 10% अनुमानित वार्षिक विद्युत मांग वृद्धि की दर से वर्ष 2012 तक उड़न राख की मात्रा 170 मिलियन टन से भी अधिक हो जायेगी जिससे विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याएं (इसमें सन्निहित भारी एवं लेशमात्र तत्वों के कारण) तथा उसके रख-रखाव के लिए एक बड़े भूखण्ड की आवश्यकता एक समस्या है। अतः उड़न राख के सुरक्षित रख-रखाव के साथ उसके समुचित पर्याहितैषी उपयोग के लिए उचित तकनीक की महती आवश्यकता है। वस्तुतः अभी तक उड़न राख के कुल उत्पादन का केवल 42% भाग मुख्यतः ईंट बनाने, भूमि भराव और सिविल कार्यों में उपयोग किया जा रहा है। इस दिशा में केन्द्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान (सी एफ आर आई) ने विगत बीस वर्षों से उड़न राख के कृषि एवं वानिकी के क्षेत्र में व्यापक उपयोग पर महत्वपूर्ण शोध कार्य किया है जिनमें निम्न सतही भूमि, परती एवं क्षारीय भूमि, अनुपजाऊ भूमि तथा परित्यक्त राख तालों का पुनरुद्धार मुख्य है। इसमें विभिन्न ताप विद्युत गृहों जैसे फरक्का एवं बकेश्वर (पश्चिम बंगाल), नेवेली (तमिलनाडु), रामागुंडम, मनुगुरू (आंध्र प्रदेश), चन्द्रपुर एवं भूसावल (महाराष्ट्र), अनपरा, ओबरा एवं हरदुआगंज (उ.प्र.) तथा धनबाद (झारखंड) के आसपास के क्षेत्रों की विभिन्न प्रकार की मृदाओं में 25 से 200 T/ha की दर से प्रयोग करके अध्ययन किया गया। जिसमें मृदा के मुख्य गुण जैसे भौतिक-रासायनिक तथा जैविक गुण, मृदा विन्यास एवं अनुकूलन में सार्थक वृद्धि पायी गयी। इसके अतिरिक्त विभिन्न खाद्यान्नों, तिलहनों, रेशों एवं सब्जियों आदि (जैसे, धान, गेंहू, बाजरा, सरसों, आलू, कपास, मूंगफली, मक्का, गन्ना, गाजर, मूली, प्याज, आदि) की उत्पादकता में (20-60%) वृद्धि के साथ-साथ पोषकता में भी वृद्धि पायी गई। उड़न राख के अधिक मात्रा में उपयोग से पौधों एवं फसल उत्पादों में भारी एवं लेशमात्र तत्वों में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं पायी गयी। उड़न राख मिश्रित मृदा में उगने वाली फसलें 10-15 दिन पहले ही परिपक्व हो जाती हैं तथा इसमें कीटनाशक गुण भी पाया जाता है। उड़न राख संशोधित मृदा पर बहुत सी वानिकी प्रजातियों जैसे शीशम, सिरिस, यूकेलिप्टस, एकेसिया आदि उगाकर उसे पुनर्वासित किया गया। वृक्ष प्रजातियों जैसे पोपलर, शीशम, यूकेलिप्टस, मीठी नीम तथा पुष्पीय एवं सगंधीय पौधे जैसे गेंदा, कार्नेशन, सूर्यमुखी, नींबू घास तथा लिली को उड़न राख डंप पर उगाया गया। उड़न राख की इन सभी विशेषताओं तथा लाभप्रद उपयोगों के विषय में सीएफआरआई ने ताप विद्युत संयंत्रों के निकटवर्ती ग्रामीण किसानों के खेतों में फसल उगाकर उन्हें अवगत कराया तथा समय-समय पर

किसान मेला, पोस्टर एवं समाचार पत्रों के माध्यम से प्रचार-प्रसार किया जिसके फलस्वरूप किसानों में उड़न राख प्राप्त करने की होड़ सी लग गई है। हमारे देश में लगभग 93.6 मिलियन हेक्टेयर भूमि परती तथा अनुपजाऊ है जिसमें से करीब 20 मिलियन हेक्टेयर भूमि को हम उचित तकनीक से उपजाऊ बना सकते हैं। इस प्रकार यदि हम 100 टन प्रति हेक्टेयर की दर से परती भूमि में प्रयोग करें तो प्रतिवर्ष उत्पन्न होने वाली उड़न राख एक मिलियन हैक्टेयर भूमि में ही प्रयुक्त हो पायेगी तथा अगले 20 वर्षों तक उड़न राख का उपयोग परती भूमि के सुधार में किया जा सकता है। जिससे हमारे देश के किसानों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में भी सुधार होगा।

Sustainable use of fly ash in agro-forestry

A K Sinha, N.K.Srivastava & L C Ram
Central Fuel Research Institute, Dhanbad - 828 108 (Jharkhand)

Abstract

In India presently about seventy percent of the total energy demand is met from coal via combustion in Thermal Power Plants (TPPs). Approximately 240 million tons of coal (average ash : 35-40%) is being consumed in 85 existing Thermal Power Plants producing about 110 million tons of fly ash, which is expected to exceed 170 million tons per annum by the end of 2012 in view of 10 per cent annual growth in the energy demand. It poses handling, storage, disposal and deleterious environmental concerns apart from occupying a large area for its disposal. Hardly 42% of fly ash in the country is being utilized mainly in brick making, land filling and civil construction. In this direction, CFRI has been conducting large scale field demonstration studies on the bulk use of fly ash in agro-forestry sector for the last 20 years including reclamation of waste land, mine spoil, ash filled low lying area and abandoned ash ponds. The study has been conducted in different soil types and varied agro climatic conditions through the application of fly ash @ 25-200 tons/ha in the vicinity of different TPPs such as Farakka and Bakreshwar (W.B.), Neyveli (T.N.), Ramagundam, Manuguru (A.P.), Chandrapur and Bhusawal (M.S.), Anpara, Obra and Harduaganj (U.P.) and Dhanbad (Jharkhand). It is observed that various physico-chemical and biological properties of different agricultural lands/problematic soil/wasteland/mine spoil/abandoned ash significantly ($p<0.05$) improved by the application of fly ash/pond ash in bulk quantities on sustainable basis apart from increase in the yield (20-60%) of different crops such as wheat, paddy, maize, sugarcane, groundnut, mustard, gram, arhar, cotton, linsed, vegetable crops as also in the growth and yield of different forestry/ornamental and fruit tree species to an appreciable extent.CFRI has played an important role in popularizing various beneficial effects of fly ash/pond ash among the local farmers in the vicinity of different TPPs to improve the fertility status of their field soil and significantly increasing the yield of various crops to a great extent through various extension programs : personal contacts, pamphlets, audio-visual aids, Kisan Mela/Gosthi etc. involving different concerned organizations. The farmers are now fully convinced of beneficial uses of pond ash and coming forward in utilizing it in their fields. Thus of the 93.6 million hectare unproductive land in the country, about 20 million hectare of land can be suitably reclaimed and made cultivable as well as the we will be able to use fly ash/pond ash for the reclamation of waste/degraded in coming 20 years or so if we apply ash @ 100 ton/ha land through this eco-friendly technology. The socio-economic condition of the farmers/local inhabitants will be greatly improved.

ज्वार रस की उचित किण्वन अवस्था निर्धारण द्वारा इथेनाल उत्पादन में वृद्धि'

शिव प्रसाद, एच सी जोशी, लता* एवं आर कौशिक
पर्यावरण विज्ञान संभाग, *सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

सारांश : उचित किण्वन अवस्था निर्धारण द्वारा इथेनाल उत्पादन में वृद्धि के लिये यीस्ट स्ट्रेन *सैकेरोमाइसीस सेरेविसी* एनसीआईएम 3186 का प्रयोग किया गया। शर्करायुक्त ज्वार रस से उचित किण्वन अवस्था निर्धारण प्रक्रिया द्वारा अधिकतम किण्वन क्षमता व इथेनाल उत्पादन वृद्धि के लिये pH 5.0, तापक्रम 30ºC, 10% इनाकुलम दर व 0.03% अमोनियम सल्फेट की मात्रा उत्तम पायी गयी। पीसीएच 109 ज्वार प्रजाति के रस से इथेनाल उत्पादन क्षमता का आकलन निर्धारित किण्वन प्रक्रिया अवस्था के आधार पर, अधिकतम इथेनाल उत्पादन दो कटाई द्वारा 3332 L/

ha तक प्राप्त किया गया। इस निर्धारित उचित किण्वन अवस्था को ज्वार प्रजाति से वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में इथेनाल उत्पादन वृद्धि के लिये किया जा सकता है।

Enhancement of ethanol production by optimization of fermentation process from Sweet Sorghum juice

Shiv Prasad, H C Joshi, Lata* & R Kaushik
Division of Environmental Sciences, *Division of Microbiology
Indian Agricultural Research Institute
New Delhi 110012

Abstract

Enhancement of ethanol production by optimization of fermentation process was done by yeast strain *Saccharomyces cerevisiae* NCIM 3186. Optimal fermentation strategy for Sorghum juice fermentation process was found to be the best with maximum ethanol yield coefficient and fermentation efficiency for enhancement of ethanol production with the condition of pH 5.0, temperature 30ºC, inoculum rate 10% and ammonium sulphate supplementation of 0.03%. Maximum ethanol production potential of Sorghum PCH109 cultivar juices were estimated based on optimal fermentation strategy for Sorghum juice fermentation process, and ethanol yield was obtained up to 3332 L/ha from two cutting. This optimal fermentation process strategy could be used for enhancement of ethanol production from Sweet Sorghum juice as source of renewable energy.

वातावरण में बढ़ते हुए कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर का पौधों पर प्रभाव : एक विश्लेषण*

डी सी उप्रेती, डी सी सक्सेना, नीता द्विवेदी, अनुपम राज, गणेश पासवान, रंजन दास एवं सुजाता
राष्ट्रीय अध्येता परियोजना, पादप कार्यिकी विज्ञान संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
और
एस सी गर्ग, एच के मैनी एवं ए पी मित्रा
राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नई दिल्ली-110012

सांराशः वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ती हुई सान्द्रता का फसल उत्पादन पर प्रभाव से सम्बन्धित अध्ययन करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में राष्ट्रीय अध्ययेता परियोजना के अन्तर्गत ओपन टॉप चैम्बर एवं फेस (FACE) प्रौद्योगिकी की स्थापना की गई है। इस प्रौद्योगिकी द्वारा दक्षिण एशिया नेटवर्क की सहायता से बंगलादेश, नेपाल, श्रीलंका, पाकिस्तान तथा भारत में कार्बन डाइऑक्साइड के बढ़ते हुए स्तर का अनाजों, दलहनों व तिलहनों के उत्पाद पर प्रभाव से संबंधित अनुसंधान किए जा रहे हैं। भारतीय अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ा हुआ स्तर ब्रैसिका प्रजातियों में नमी की कमी के प्रति सहिष्णुता बढ़ाता है। इस अध्ययन से ब्रैसिका प्रजातियों के कार्बन डाइआक्साइड से प्रभावित गुणों के स्थानान्तरण की संभावना का भी पता चला है। कृषि संबंधी इन अनुसंधानों से अर्जित आंकड़ों का उपयोग आदर्श फसलीय पौधों के विकास तथा भविष्य में कार्बन डाइऑक्साइड के बढ़े हुए स्तर से परिस्थितियों के लिए अनुकूल प्रबंधन की संभावना हो सकती है।

Responses of plants to the rising concentration of atmospheric carbon dioxide : An analysis

D C Upreti, D C Sexena, Neeta Dwivedi, Anupam Raj, Ganesh Paswan, Ranjan Dass & Sujatha
National Fellow Project, Division of Plant Physiology
Indian Agricultural Research Institute, New Delhi 110 012
and
S C Garg, H K Maini & A P Mitra

National Physical Laboratory, New Delhi 110012

Abstract

The impact of rising concentration of atmospheric CO_2 on the productivity of crop plants was studied using Open Top Chamber (OTC) and Free Air CO_2 Enrichment (FACE) technologies, established under National Fellow Project at Indian Agricultural Research Institute, New Delhi. These investigations led to the establishment of South Asian CO_2 research network of Bangladesh, Nepal, Sri Lanka, Pakistan and India to study the effect of elevated level of CO_2 on the productivity of cereals, pulses and oil seeds. Indian studies revealed that elevated CO_2 significantly ameliorated the effect of adverse drought stress in Brassica species. It also demonstrated the possibility of transferring CO_2 responsive characters in Brassica hybrids. The data generated from these investigations may possibly help in developing plant type and identifying a suitable crop management system for future high CO_2 environment.

निम्न व उच्च T_g वाले बहुलकों के वैद्युत अपघट्यों की आयनिक-चालकता पर फिलर का प्रभाव*

एस एल अग्रवाल*, ए अवधिया, एस के पटेल एवं आर बी पटेल
सॉलिड स्टेट आयनिक्स प्रयोगशाला, भौतिकी विभाग, अ.प्र.सि.वि.वि., रीवा - 486 003 मध्यप्रदेश

सारांश : प्रस्तुत शोध कार्य में उच्च आयनिक चालक बहुलक (पॉलिमर) जेल वैद्युत अपघट्य के निर्माण का प्रयास किया गया है, जो यांत्रिक रूप से प्रबल एवं द्रव ह्रास की समस्या से मुक्त हो। इस हेतु वर्तमान अध्ययन में दो पूर्णतया भिन्न प्रकृति के बहुलक पॉलीविनाइल पाइरोलिडोन (PVP) एवं पॉली इथाइलीन ग्लाइकॉल (PEG) जिनका ग्लास ट्रांजीशन टेम्प्रेचर (T_g) क्रमशः 453 K एवं 233 K है, का प्रयोग जेल वैद्युत अपघट्य का आधारभूत ढांचा बनाने के लिए किया गया है। पॉलीमर जेल वैद्युत अपघट्यों को अमोनियम एडिपेट व अमोनियम सक्सिनेट के विलयनों के उपयोग से बनाया गया है। PVP एवं PEG के फिलर रहित जेल अपघट्यों की अधिकतम आयनिक चालकताएं लगभग बराबर हैं। फिलर PVA का सम्मिश्रण PVP आधारित कम्पोजिट जेल वैद्युत अपघट्यों की चालकता पर PEG के कम्पोजिट जेल की अपेक्षा ज्यादा प्रभावित करता है। साथ ही PVP आधारित कम्पोजिट जेल की अधिकतम चालकता PEG आधारित कम्पोजिट जेल से अधिक है।

Effet of filler on ionic conductivity of electrolytes of low and high T_g polymer

S L Agarwal*, A Awadhiya, S K Patel & R B Patel

Solid State Ionics Laboratory, Department of Physics, APSVV, Rewa, (M.P.)

Abstract

In the present work, an attempt has been made to develop a highly ion conducting polymer gel electrolyte free from exudation problem and also possessing good mechanical integrity. Polyvinylpyrrolidone (PVP) with high Tg (453 K) and polyethlene glycol (PE G) possessing low Tg (233K) have been utilized as host matrix in development of the composite gel electrolyte system. Solutions of ammonium adipate and ammonium succinate in Dimethyl sulphoxide (DMSO) have been used to prepare composite gel electrolytes. The maximum ionic conductivity of pristine gel electrolytes of PVP and PEG have been found to be of the same order. It is revealed that addition of organic filler PVA affects the conductivity of PVP based composite gel electrolytes in greater amounts in comparison to PEG based composite gel electrolytes. Moreover, the optimum ionic conductivity of PVP based composite gel electrolytes system has been found to be greater than that of PEG based composite gel electrolytes.